संयमः खलु जीवनम्

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

संयम ही जीवन है। संयम सत्यं, शिवम् और सुन्दरम् है। संयम का अर्थ है नियन्त्रण करना। मन वाणी और शरीर पर नियन्त्रण करना संयम कहलाता है। संयम जीवन का बहुत बड़ा सूत्र है। सभी प्राणियों के प्रति दया भाव रखना संयम है। कहा भी गया है सर्व भूतेषु संयमः अहिंसा। अर्थात् सभी प्राणियों पर संयम भाव रखना अहिंसा कहलाता है। भगवान् महावीर ने अहिंसा का उपदेश दिया। उन्होंने अपने सम्पूर्ण जीवन में अहिंसा का पालन किया। मन, वाणी और शरीर पर नियन्त्रण रखा। जैन दर्शन में मन को पापकारी प्रवृत्तियों से बचाने के लिए गुप्ति का विधान है। गुप्ति भी संयम ही है। इसमें आत्मा को पापकारी प्रवृत्तियों से बचाया जाता है। जिससे संसार के कारणों से आत्मा का गोपन अर्थात् आत्मा की रक्षा होती है वह संयम है। संयम का शाब्दिक अर्थ है– सुरक्षा। मन, वचन, काय को सावद्य क्रियाओं से रोकना संयम है। मानव को लौकिक विषयों की इच्छा न करके रत्नत्रय–स्वरूप आत्मा को रत्नत्रय के प्रतिपक्षी मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान और मिथ्या चारित्र से बचाने के लिए पापयोगों का निग्रह करना चाहिए। मन, वचन और काय संयम से मानव अपने लक्ष्य तक पहुंच सकता है। संरम्भ, समारम्भ और आरम्भ में प्रवृत्त हुए मन के व्यापार को रोकना मन का संयम है। किसी को मारने की इच्छा करना संरम्भ है। मारने के साधनों पर विचार करना समारम्भ है और मारने की क्रिया को प्रारम्भ करने का विचार करना आरम्भ है। इन तीनों को रोकना आवश्यक है। असत्य, कर्कश, अहितकारी, एवं हिंसाकारी भाषा का प्रयोग नहीं करना, स्त्रीकथा, राजकथा, चोरकथा, भोजनकथा, आदि वचन की अशुभ प्रवृत्ति और असत्य वचन का परिहार करना वाणी का संयम है। मन के चिन्तन को भाषा वर्गणा द्वारा प्रगट किया जाता है। शारीरिक क्रिया को संरम्भ, समारम्भ और आरम्भ में प्रवृत्त न करना, उठने–बैठने, खड़े होने खड्डा, खाई आदि लांघने और इन्द्रियों के प्रयोग में संयम रखना, यतनापूर्वक सत् प्रवृत्त करना शरीर का संयम है। शरीर की चेष्टा की प्रवृत्ति नहीं होना अथवा कायोत्सर्ग करना कायगुप्ति है। हिंसादि कार्यों से निवृत्त होना काय संयम है। कायोत्सर्ग अर्थात् शरीर की अपवित्रता, असारता और आपत्ति में

निमित्तपना जानकर उससे ममत्व न करना काय संयम है। इन्द्रियों पर निरोध करना भी संयम है। जब इन्द्रियों पर नियन्त्रण किया जाता है तो विषयों से इन्द्रियों को हटाकर आत्मकेन्द्रित किया जाता है। यह क्रिया अभ्यास के द्वारा सम्पन्न होती है। इन्द्र शब्द आत्मा का वाचक है। आत्मा के चिन्ह अर्थात् आत्मा के सद्भाव की सिद्धि में कारणभूत अथवा जो जीव के अर्थ ज्ञान में निमित्त बने उसे इन्द्रिय कहते हैं। प्रत्यक्षरूप से जो अपने–अपने विषयों का स्वतन्त्र आधिपत्य करती हैं, उन्हें भी इन्द्रिय कहते हैं। चक्षु, श्रोत, घ्राण, जिह्वा और स्पर्श ये पांच इन्द्रियां हैं अर्थात् मतिज्ञानावरण के क्षयोपशम की शक्ति का नाम इन्द्रिय है। इन्द्रियों को अपने–अपने विषयों की प्रवृत्ति से रोकना इन्द्रिय संयम है। जिस प्रकार से उन्मार्गगामी घोड़ों को लगाम के द्वारा निग्रह किया जाता है वैसे ही तत्त्वज्ञान की भावना के द्वारा इन्द्रियरूपी घोड़ों को विषयरूपी उन्मार्ग से हटाया जाता है। जो साधक विषयों से इन्द्रियों को विमुख नहीं करता, इन्द्रियां उसके तेज को नष्ट कर देती हैं। जिन जीवों की इन्द्रियां जीवित हैं, उनका दुःख औपाधिक नहीं है, स्वाभाविक है, क्योंकि उनकी विषयों में रति देखी जाती है जैसे, हाथी बनावटी हथिनी के शरीर को स्पर्श करने के लिए दौड़ता है और पकड़ लिया जाता है। इसी प्रकार मछली बडिश के मांस को चखने के लोभ से प्राण खो देती है। भ्रमर घ्राणेन्द्रिय के विषय से सताया हुआ संकुचित हुये कमल में गंध के लोभ से कैद होकर दुःखी होता है। पतंगा दीपक की ओर दौड़कर जल मरता है और हरिन श्रोतेन्द्रिय के विषयवश मधुरध्वनि के वशीभूत हो शिकारी के हाथों मारा जाता है। इससे ज्ञात होता है कि इन्द्रियां दुःखरूप ही हैं। यदि इन्द्रियां दुःख रूप न होती तो विषय की इच्छा भी नहीं होती। देखने का कार्य चक्षु इन्द्रिय के द्वारा होता है। जो देखा जाता है वह रूप है। इसलिए चक्षुइन्द्रिय का विषय रूप है। चेतन–अचेतन पदार्थों के व्यवहार, आकार और वर्ण में राग–द्वेष तथा अभिलाषा का अभाव चक्षुरिन्द्रिय संयम है। चक्षु रूप को ग्रहण करता है। रूप यदि सुन्दर है तो राग का हेतु है और असुन्दर है तो द्वेष का हेतु है। जो साधक उस रूप में राग–द्वेष नहीं रखता है वही वीतराग है। श्रोतेन्द्रिय के द्वारा ग्राह्य विषय शब्द जो सुनने में अच्छा लगता है राग का हेतु है उसे मनोज्ञ कहा जाता है, और जो द्वेष का हेतु होता है उसे अमनोज्ञ कहा जाता है। जो इन दोनों में सम रहता है वह संयमी है। घ्राणेन्द्रिय के द्वारा गन्ध का ग्रहण होता है। जो व्यक्ति

इस पर नियन्त्रण करता हैं वह संयम का पालन करता है। जिसके द्वारा स्वाद का अनुभव किया जाता है, वह रसनेन्द्रिय है। जिह्वा से ग्राह्य विषय को रस कहते हैं। जो रस राग का कारण है, उसे मनोज्ञ कहते हैं और जो रस द्वेंष का कारण है, उसे अमनोज्ञ कहते हैं। संयमी व्यक्ति रसनेन्द्रिय पर नियन्त्रण करता है। काय के ग्राह्य विषय को स्पर्श कहते हैं। जो स्पर्श मनोज्ञ होता है वह राग का कारण है और जो स्पर्श अमनोज्ञ होता है वह द्वेष का कारण है। जो इन दोनों में सम रहता है वह संयमी कहलाता है। इसी कारण संयम को जीवन का आधार कहा गया है। संयमी व्यक्ति जीवन में आत्मोत्कर्ष को प्राप्त करता है। ऋषियों, महर्षियों, मुनियों ने संयम के द्वारा ही श्रेष्ठता प्राप्त की है।